अध्याय - 7

समापन

गिरिजाकुमार माथुर के काव्य का विस्तृत विवेचन करने के बाद उनके कृतित्व के संबंध में महत्वपूर्ण निष्कर्षों का सहज आकलन किया जा सकता है।

आधुनिक बोध और नूतन काव्य संवेदनाओं के सफल कलाकार के रूप में गिरिजाकुमार माथुर 'तार-सप्तक' के कवियों में सबसे अलग दिखायी देते है। माथुरजी उन विकासशील कवियों में से है जिन्होंने किसी वाद विशेष की परिधि में सीमित होकर काव्य रचना नहीं की है। अपितु आधुनिक हिंदी कविता की विभिन्न धाराओं की अतिवादी प्रवृत्तियों से अपने को अछूता रख, उनके बीच परस्पर स्थापित किया है। उन्होंने छायावाद तथा वैयक्तिक काव्यधारा की भांति न केवल व्यक्ति को महत्व दिया है और न प्रगतिवाद की भांति केवल समाज को, अपितु युगीन परिप्रेक्ष्य में व्यक्ति तथा समाज दोनों का समान महत्व अंगीकार कर दो अतिवादों में संतुलन स्थापित किया है। इसीकारण उनके काव्य में छायावाद का रंगीन रोमांस, प्रगतिवादी सामाजिक यथार्थ की सत्य और मानवतावादी दृष्टि और नयी कविता का नया युगबोध, भावबोध एवं नवीन वैज्ञानिक चेतना एक साथ मौजूद है।

गिरिजाकुमार माथुर की जीवनी विविधताओं का चलचित्र है। विविध स्थान, परिस्थितियाँ एवं विविध विचारधाराओं के गहरे प्रभाव से कवि के व्यक्तित्व का निर्माण हुआ है। उनके हृदय में एक और स्नेह की तरलता है, दूसरी ओर विद्रोह की आग, एक ओर त्रस्त और उत्पीडित मानवता के प्रति असीम करूणा है, दूसरी ओर अन्याय और शोषण के प्रति आक्रोश। एक ओर वर्तमान के प्रति खीझ है, तो दूसरी ओर भविष्य के प्रति आशा और विश्वास। उनका व्यक्तित्व कुछ ऐसे विरोधी तत्वों से निर्मित हैं, जिसमें कुसुम-सी कोमलता और वज्र-सी कठोरता है।

माथुरजी एक समर्थ कवि होने के साथ-साथ जागरूक काव्य चिंतक भी है। माथुरजी मानव मूल्यों के प्रति दायित्व चेतना को आधुनिक कविता का सबसे महत्वपूर्ण विषय मानते है। उनकी दृष्टि से वे सभी पक्षों और प्रवृत्तियों के तत्व ग्राह्य है, जिनका रास्ता, मानवीयता, सामाजिक न्याय और नविन भविष्य की आस्था से होकर है। व्यक्ति-मानव की प्रतिष्ठा उनके काव्य की महत्वपूर्ण विशेषता है। उन्होंने अपने काव्य में लघु मानव की प्रतिष्ठा की है, और न

अतिमानव की। एक साधारण मध्यवर्गीय मनुष्य को उसकी दुर्बलताओं, और सबलताओं के साथ अपने काव्य में प्रस्तुत किया है। उन्होंने सामाजिक परिप्रेक्ष्य में ही व्यक्ति के महत्व को स्वीकारा है। क्योंकि सामाजिक चेतना और व्यक्ति चेतना को अलग-अलग रख कर नहीं देखा जा सकता।

कवि ने 'आधुनिकता' के प्रादुर्भाव की चर्चा करते हुए प्रसंगवश परिवेश के संबंध में, परिवेश बदलने के लेए दो कारणों का संकेत दिया है पहला है - द्वितिय विश्वयुद्ध जिसके परिप्रेक्ष्य में बहुत सी समस्याएँ उत्पन्न होकर 'मानवीय' परिवेश में तात्विक संक्रमण उदित हुआ। तो दूसरा कारण बताया है - वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रगति। इसके परिणाम स्वरूप मनुष्य जटिल यंत्रों पर निर्भर एवं निष्क्रिय पूर्जामात्रा बनकर रह गया। इससे वह 'अत्यंत नगण्यं ही नहीं बना बल्कि उसका अस्तित्व भी खतरे में पड गया। द्वितिय विश्वयुद्ध विज्ञान एवं तंत्र-सत्ता के प्रभाव से भावक्षेत्र आंदोलित हो उठा और पश्चिम तथा अन्य औद्योगिक समाजों में आदमी की निरर्थकता का 'अहसास' तीव्र भय और त्रास बर्बर भोगवादी आदि प्रतिक्रियाएँ दिखलाई पडी।

माथुरजी के मन में राजनीतिकता से कविता को बचने की भावना रही है। अतः कवि ने अपने राजनीतिक विचारों को स्पष्ट नहीं किया है। फिर भी उनकी कविता में सामाजिक चेतना के साथ-साथ राजनीतिक चेतना के स्वरों की प्रधानता भी है। अपने काव्य-जीवन के प्रारंभ में ही माथुरजी ने साम्राज्यवादी शक्तियों के विरूद्ध कई कविताएँ हैं। 'अदन पर बम वर्षा', 'तूफानों की छाया', 'एशिया का जागरण' आदि कविताओं में कवि साम्राज्यवाद के विरोध में खडा है। साम्राज्य वाद का विरोध स्वतंत्रता के बाद की कविताओं में भी दिखायी देता है। 'धरातीप', 'हब्शदेश' आदि कवितायें इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है। तो 'पंद्रह अगस्त' कविता में कवि ने अपनी जागरूकता का परिचय दिया है। 'पहरूए सावधान रहना' की सीख से यह दिखायी देता है किकवि स्वतंत्र भारत की राजनीति से अपने को अलग नहीं रख सका। उनकी कविता से युगीन राजनीतिक असफलता एवं विडंबना सूचित होती है। वैसे हम देखे तो माथुरजी को वही राजनीतिक दृष्टि स्वीकार्य है। जिसमें मानवीयता हो, मानव-मंगल के तत्व विद्यमान हो।

माथुरजी के काव्य की दूसरी विशेषता यह है कि उनके काव्य में समसामायिक भाव-बोध और यथार्थ के चित्र भी मिलते है। वैसे माथुर जी नगरीय बोध के कवि है, फिर भी उनके काव्य में लोकजीवन का यथार्थ अभिव्यक्ति मिलती है। बहुतांश शहरी जीवन किन समस्याओं से पीडित है और किन परिस्थितियों में अपना जीवन बिता रहा है उसका चित्र भी माथुरजी के काव्य में

मिलता है। जो उनके काव्य को एक सशक्त आयाम प्रदान करता है। मनुष्य को वर्तमान जीवन सर्वत्र उलझने, तनाव मानसिक उहापोह, चिंता, निराशा और खिन्नता से भरा हुआ है। वह मनमस्तिष्क से बौना हो गया है। इस स्थिति में किन जीवन मूल्यों को अपनाया जाये? यह एक गंभीर ज्वलंत प्रश्न है। इस समसामायिक युग-बोध की अभिव्यक्ति कवि की अनेक रचनाओं में मिलती हैं। युगीन भाव सत्यों को वैज्ञानिक चेतना से उद्भूत परिवर्तनों को कवि ने पूरी तीव्रता से चित्रित किया हैं। युगजीवन की यथार्थ अभिव्यक्ति के लिए, कवि ने चिरपरिचित सरल और सामान्य विषयों को ही अपनाया है।

आर्थिक विषमता का चित्रण माथुरजी के काव्य की एक खासियत है। उनकी रचनाओं में वर्ग वैषम्य का चित्रण बहुत ही मार्मिक हुआ है। सामाजिक विषमता का चित्रण करने हुए माथुरजी कहते है, आज के मानव का जीवन त्रिशंकु के समान हो गया है। सामाजिक विषमता पग-पग पर उसका मार्ग अवरुध् कर रही है। समाज में एक ओर उच्चवर्ग के लोग वैभवसंपन्न और अपार संपत्ति के स्वामी है तो दूसरी ओर निम्नवर्ग तथा मध्यवर्ग को दिन-भर कडा संघर्ष करने पर पेट भरने के लिए दो वक्त की रोटी ठीक तरह से नहीं मिलती। उन्हें रोटी के लिए अपने आदर्शों का बलिदान करना पडता है। अमीरी और गरीबी की विषम चक्की में आज का मानव बुरी तरह पिस रहा है। उसकी कठिनाईयों का कोई अंत नहीं है। उसका जीवन निरूद्देश तथा निस्सार है। और इसका कारण है - हमारी विषम अर्थव्यवस्था।

मूल्यसंबंधी समस्या और सर्जक का दायित्व के बारे में गिरिजाकुमार माथुरजी कहते है कि साहित्य की भूमि आधारगत मानवीय मूल्यों की भूमि है। साहित्य का काम जीवन के प्रत्येक पक्ष से आधारभूत मूल्यों और तत्वों को समेटकर उनमें संतुलन मूल्यों और तत्वों को समेटकर उनमें संतुलन स्थापित करना है। वह किसी एक प्रवृत्ति या पक्ष विशेषतक सीमित होकर उनमें समाकर नहीं रही सकता। वह सभी पक्षों और प्रवृत्तियों से उन तत्वों को ग्रहन कर लेता है, जिनका रास्ता मानवीयता, सामाजिक न्याय और जीवन भविष्य की आस्था से होकर जाता है। सर्जक का दायित्व उसी मानवीयता के रास्ते पर चलना है।

गिरिजाकुमार माथुरजी ने वास्तविकता, जीवन और जगत् की समस्याओं के साथ इतिहास बोध लक्षित होता है। यथार्थ की नूतन पृष्ठभूमी पर ऐतिहासिकता और सहज मानवीयता को अपने काव्य का माध्यम बनाया था। अपने काव्य का माध्यम बनाया था। आधुनिक युग के मानव को संघर्ष, क्रांति परस्पर द्वेष तथा तनाव से मुक्त करने के लिये कवि ने ऐतिहासिक महापुरूषों का गौरव-गान किया है।

माथुरजी के काव्य की मूल संवेदना रंग, रस और रोमान है जिसे उन्होंने सामाजिक यथार्थ से समन्वित करके प्रस्तुत किया है। उनकी प्रारंभिक रचनाओं में छायावादी परिवेष्ठन, वायवीयता तथा अमूर्तता के स्थान पर मांसलता, स्थूलता तथा लौकिक प्रणयानुभूतियों का प्राधान्य है। उनमें मिलन, मिलनातुरता, लालसा, भोग और तज्जनित अनेक भावों का अंकन रोमानी शैली में पूरी ईमानदारी से किया गया है। प्रणयबोध को शब्दबद्ध करनेवाली माथुर की अनेक कविताओं में मिलन का संगीत रजनीगंधा की मादकता भी जगाता है और मध्यमवर्गीय व्यक्ति की सुखद लालसाओं के दीपों का प्रकाश भी फैलता है।

माथुरजी के काव्य में प्रणयजनित पीडा का स्वर भी मिलता है। जीवन के प्रति तीव्र आसक्ति के कारण उन्होंने न केवल सुखद क्षणों की मधुर मादक अनुभूतियों को अभिव्यक्ति दी है। अपितु प्रेमजनित पीडा, विषाद, अवसाद और निराशों को भी शब्दों में बाँधा है। 'मंजीर', 'नाश और निर्माण', 'धूप के धान' सभी में प्रणयजनित वेदना का रंग फैला दिखाई देता है। उनकी प्रणयपीडा स्वरप्रायः उसी रंग रोगन के साथ व्यक्त हुआ है। माथुरजीह के विरहानुभूति में नवीन उद्‌भावनाओं के साथ-साथ स्वाभाविकता, सरसता और मर्मस्पर्शिता भी है। उनके काव्य में परंपरित विरह व्यथा जितनी मार्मिक है उतनी ही उसकी नवीन उद्‌भावना जीवन के अधिक समीप होने से अत्यंत हृदयस्पर्शी हो गयी है।

गिरिजाकुमार माथुर का काव्य सौंदर्यानुभूति की दृष्टि से अपनी अलग विशिष्टता लिए हुअे है। उनके सौंदर्यबोध में प्रवृत्ति के चित्रों ने और नारी सौंदर्य से अनुरंजित और गंधित कविताओं में दिखायी देता है। नारी सौंदर्य के चित्रण में कवि की स्थूल और सूक्ष्म दोनों प्रकार की अनुभूतियाँ अभिव्यक्त हुई है। देह सौंदर्य के साथ-साथ मन सौंदर्य और मनोभावों के उत्पन्न सौंदर्य के बिंब भी बडी मात्रा में मिलते है। मुलतः वे प्रेम और प्रकृति के ही कवि है। प्रकृति की अनगनित छबियाँ, अनगिनती रूपों के साथ माथुरजी की कविताओं में आकर कैद हो गई है। यह सौंदर्य न केवल अना घ्रात, गंधित, मदिर और रंगीन है अपितु इसमें कवि मानस में लहराती भावनाओं का तीव्र वेग भी है और कवि मन की सशक्ति भी है।

माथुरजी ने वैयक्तिक सुख-दुःखात्मक अनुभूतियों को सूक्ष्मता से चितेरा है। उनके रचनाओं में वैयक्तिक अनुभूतियों की सहज अभिव्यक्ति हुई है। जिसमें अहंवादी रूप प्रायः उतना नहीं पाया जाता। उन्होंने अपने सुख, दुख दर्द तथा ऐश्वर्य से अधिक समाज के पीडितों की पीडा को मुखरित किया है।

माथुरजी के काव्य में अपने राष्ट्र के प्रति सतत जागरूकता दिखायी देती है।

उनकी राष्ट्रीयता कहीं भारत भूमि के चित्रण में, कही देश के नेताओं के दिए गए जागृति के संदेश में, कहीं धरती के प्रति आस्था प्रेरित अनुराग के अंकन में, कहीं राष्ट्र की आत्मा बने महापुरूषों के चित्रण में , तो कही देश के नवयुवकों को उपलब्ध आजादी की सुरक्षा के लिए निरंतर जागृति के मंत्र देने में अभिव्यक्त हुई है। माथुरजी के काव्य में राष्ट्रीयता और संकीर्ण दृष्टि की अपेक्षा विश्वकल्याण और विश्वबंधुत्व की भावना के रंग अधिक गहरे दिखायी देते है। साम्राज्यवाद के शोषण, पीडा, अनाचार के प्रति तीव्र खिन्नता है। माथुजी ने अंतर्राष्ट्रीय जनजागरण के साथ-साथ राष्ट्रीय स्वाधीनता की चेतना को जगाने का प्रयास भी किया है। विदेशी शासन के अत्याचारों और शोषण के विरूद्ध संघर्ष करनेवालों को उत्साहित किया है। वे अपनी लेखनी द्वारा प्रत्येक भारतीय के मन में उस जोश को भरना चाहते है, जिससे वे अत्याचारी के सम्मुख कभी न झुके। माथुरजी के काव्य का मूल स्वर ही मानवतावादी है। उनके काव्य में मानवमात्र के सर्वांगीण विकास की आकांक्षाओं का चित्रण मिलता है। समाज के नीचतम, दलितों, पीडितों, शोषीतों के प्रति कवि की सच्ची सहानुभूति व्यक्त हुअी है। शोषकों के नाश की उन्होंने कामना की है।

माथुरजीने जीवन को नजदीकी और बारीक, नजर से देखा है। वर्तमान समाज की आर्थिक, सामाजिक विषमताओं और विसंगतियों का यथार्थ चित्रण किया है। कवि ने किसानों, मजदूरों और मध्यवर्गीय मानवों की जिंदगी के अभावों, असफलताओं, संघर्षो और कुंठाओं को उसके असलीयत में चित्रित किया है।

कवि माथुरजी ने प्रकृति को विविध रूपों में देखा है। विविध प्रकार से उसके सौंदर्य की सराहना की है। प्रकृति के नाना गतिविधियों के चित्र अंकित किए है। नवीन प्राकृतिक दृश्यों की निर्मिती की है, और विविध प्रकार से प्रकृति के प्रति अपना अनुराग व्यक्त किया है।

उनके काव्य में विज्ञान और टेक्नोलौजी का प्रभाव के साथ बौद्धिकता का नवोन्मेष भी दिखायी देता है। इसके साथ लघु मानव की प्रतिष्ठा, यथार्थबोध, आस्था, जिजीविषा सांस्कृतिक बोध और आधुनिकता आदि दिखायी देती है।

माथुरजी के काव्य का वस्तुपक्ष जितना प्रौढ है, कलापक्ष भी उतना की पुष्ट है। विषयवस्तु और टेकनीक के समान महत्व को माथुरजी ने स्वीकारा है। भाषा, छंद, ध्वनि आदि के क्षेत्र में माथुरजी प्रथम प्रयोगकर्ता कवि है। सन 1937 से ही उन्होंने प्रयोग करने शुरू किया। आगे युक्त छंद प्रतीक और उपमानों मे काफी प्रौढता आ चुकी है जो हमें

उनके नवीन काव्य में दिखायी देता है। नयी कविता के शिल्प विधान को समृद्ध करने में उनका अमूल्य योगदान है। नयी कविता के शिल्प निर्माण करनेवालों में उनका स्थान सर्वोच्च है। इनकी भाषाशैली, छंद योजना, ध्वनि योजना, प्रतीक योजना, आदि काफी समृद्ध है।

छंद के क्षेत्र में कवि ने मुक्त छंद का समर्थन किया है। संपूर्ण रचना विधान उन्होंने मुक्त छंद में किया है। मुक्त छंद के अतिरिक्त कवि ने उर्दू के 'गजल', 'रूबाई' आदि का और अंग्रेजी छंद 'ओड' का सुंदर प्रयोग किया है किंतु कहीं भी छंद के बंधनों को स्वीकारा नहीं। तुकांत योजना के लिए माथुरजी ने अधिकांशतः स्वर-ध्वनियों का आश्रय लिया है। इससे छंद में आंतरिक लयात्मकता की सृष्टि स्वतः हो गई है।

माथुरजी ने विविध काव्य-रूपों के प्रयोग द्वारा भी नयी कविता को बहुत ही समृद्ध किया है। उन्होंने परंपरागत काव्यरूपों से लेकर नव्यतम काव्यशैली का प्रयोग किया है। उनके काव्य में जहाँ परंपरागत तुकांत गीत-शैली के दर्शन होते है, वहाँ अत्याधुनिक मोनोलॉग, संलापशैली, कथा, काव्य का भी प्रयोग मिलता है। काव्य रूपों के क्षेत्र में इतनी विविधता शायद ही किसी अन्य नये कवि में मिलता हो।

आधुनिक काव्यभाषा के विकास में कवि का महत्वपूर्ण योगदान है। नये भावबोध के अनुरूप उन्होंने भाषा का नया संस्कार किया, नये शब्दों को निर्माण किया और पुराने शब्दों को नये अर्थ देकर भाषा में नवीन अर्थ भरने का सफल प्रयास किया है। जन-सामान्य की भाषा को भाव-प्रेरणा द्वारा काव्यभाषा का नया रूप दे दिया। भाषा के क्षेत्र में 'रियलिज्ज' जैसी चीज सर्वप्रथम माथुरजी ने दी। विभिन्न भाषाओं के शब्दों द्वारा तथा लोकभाषा के शब्दों से अपने शब्द भंडार को समृद्ध किया है। नवीन बिंब विधान योजना से काव्य चित्रात्मकता की निर्मिती की। युगीन भावबोध की सक्षम अभिव्यक्ति के लिये धार्मिक, सांस्कृतिक, पौराणिक, ऐतिहासिक और प्रतीकों का आश्रय लेकर कम-से-कम शब्दों में अधिकाधिक अर्थ भर दिया है। वातावरण निर्माण के लिये गहरे और हल्के रंगों का प्रयोग भी किया है। लोकोक्ति एवं मुहावरों का प्रयोग माथुरजी ने भाषिक शक्ति के लिये किया है। जिससे काव्य में कलात्मकपूर्ण चमत्कार उत्पन्न हुआ है। नव्य ध्वनि प्रयोग और नव्य शब्दों का निर्माण करके अपनी प्रतिभा और व्यक्तित्व को स्पष्ट किया है। जिससे काव्य की प्रभावोत्पादकता बढ़ गयी है। भाषा के अभिव्यक्त पक्ष को अभिव्यंजना की दृष्टि से समृद्ध शाली और प्रभावपूर्ण बनाने कि लिये संस्कृतनिष्ठ शब्दों का प्रयोग किया है।

शिल्प सौंदर्य की दृष्टि से माथुरजी के काव्य की एक विशेषता यह है कि उनके काव्य में

शीर्षक, पूर्ववर्ती, काव्यों की भाँति छोटे न होकर काफी लंबे और गद्यात्मक है, - 'धूप का ऊन', 'बरफ का चिराग', 'नीव रखनेवालों का गीत' आदि।

श्री गिरिजाकुमार माथुर 'तार-सप्तक' के कवि होने के कारण उनकी तुलना 'तार-सप्तक' के अन्य कवियों से करना उचित ही है। अतः गजानन माधव 'मुक्तिबोध', भारतभूषण अग्रवाल, नेमिचंद्र जैन, प्रभाकर माचवे, डॉ.रामविलास शर्मा और अज्ञेयजी इनके साथ माथुरजी की रचनाओं की तुलना करने के बाद तथा प्रयोगवाद की सभ प्रवृत्तियों का विचार उनकी रचनाओं में मिलने के बाद मेरी यह स्पष्ट धारणा बन गयी है कि 'तार-सप्तक' तथा प्रयोगवाद के परिप्रेक्ष्य में श्री गिरिजाकुमार माथुरजी का शीर्षस्थ स्थान है।

समग्र रूप से यह कहा जा सकता है कि संचेतना, भावानुभूति और शिल्प सभी दृष्टियों से माथुरजी का योगदान नयी कविता के क्षेत्र में अन्यतम है। काव्य वस्तु की दृष्टि से जहाँ उनके काव्य में सहज विकास की अन्तः प्रक्रिया विद्यमान है। वही कला की दृष्टि से चिर नवीनता भी मिलती है। वैसे मूल्यांकन किया जाय तो आधुनिक हिंदी काव्यधारा में विशेषतः प्रयोगवाद के परिप्रेक्ष्य में श्री गिरिजाकुमार माथुरजी का स्थान निर्विवाद श्रेष्ठ है।